बाइबल टीचर

वर्ष 17 सितम्बर 2020 अंक 10

सम्पादकीय

एक मसीही होते हुए हमारा क्या कर्त्तव्य है?

नया नियम हमें यह बताता है कि प्रत्येक मसीही को सुसमाचार लोगों को बताना है। यीशु ने कहा था, "तुम सारे जगत में जाकर सारी सृष्टि के लोगों को सुसमाचार प्रचार करो।" (मरकुस 16:15)।

यही बात यीशु ने एक महान आज्ञा देकर कहा था कि, "तुम जाकर सब जातियों के लोगों को चेला बनाओ" (मत्ती 28:19)। नये नियम के मसीही लोग इस कार्य को बड़ी लग्न के साथ करते थे जैसा कि लिखा है, "और प्रतिदिन मंदिर में और घर-घर जाकर उपदेश करने, और इस बात का सुसमाचार सुनाने से कि यीशु ही मसीह है न रूके" (प्रेरितों 5:42)। प्रेरित पौलुस प्रचार करने में बड़ा व्यस्त रहता था, और उसकी विशेषता यह थी कि वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रचार के लिये जाता रहता था। उसने कभी ऐसा नहीं सोचा कि सण्डे को एक सरमन दे दूंगा और मेरा काम समाप्त। आज बहुत से अगुवे ऐसा ही सोचते है कि "मेरा काम केवल सण्डे को सरमन देना है।" पौलुस कहता है, "और जो बातें मेरे लाभ की थी, उनको बताने और लोगों के साम्हने और घर-घर जाकर सिखाने से कभी न झिझका। वरन यहूदियों और यूनानियों के साम्हने वही देता रहा कि परमेश्वर की ओर मन फिराना और हमारे प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास करना चाहिए।" (प्रेरितों 20:20-21) एक और बड़ी विशेष बात उसने कही थी "क्योंकि मैं परमेश्वर की सारी मनसा को तुम्हें पूरी रीति से बताने से न झिझका" (प्रेरितों 20:27)। पौलुस अपना यह कर्तव्य समझता था कि मुझे अधिक से अधिक लोगों को सुसमाचार सुनाना है। वह कहता है कि "मैं सुसमाचार से नहीं लजाता इसलिये कि वह हर एक विश्वास करने वाले के लिये पहिले तो यहूदी फिर यूनानी के लिये उद्धार की सामर्थ है।" (रोमियों 1:16)। एक और बड़ी महत्वपूर्ण बात प्रेरित पौलुस ने कही थी, "सो प्रभु का भय मानकर हम लोगों को समझाते हैं और परमेश्वर पर हमारा हाल प्रगट है; और मेरी आशा यह है कि तुम्हारे विवेक पर प्रगट हुआ होगा।" (2 कुरि. 5:11)। बाइबल में लिखा है "वचन का प्रचार कर" (2 तीथु. 4:2)। प्रेरित पौलुस ने कहा था कि सुसमाचार के द्वारा तुम्हारा उद्धार होता है। यदि तुम सुसमाचार को नहीं मानते तुम्हारा विश्वास करना व्यर्थ है। (1 कुरि. 15:1-3)।

अब प्रश्न यह उठता है कि वचन को सिखाना क्यों आवश्यक है? क्यों हमें

सुसमाचार लोगों को सिखाना है? बाइबल कहती है कि यह उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ है। (रोमियों 1:16) सुसमाचार में पापी को पाप से बचाने की सामर्थ है। जो लोग यीशु के सुसमाचार को नहीं मानते प्रेरित कहता है "और जो परमेश्वर को नहीं पहचानते और हमारे प्रभु यीशु के सुसमाचार को नहीं मानते उनसे पलटा लेगा" (1 थिस्स 1:8)। वह आगे कहता है ऐसे लोग प्रभु के साम्हने से, और उसकी शक्ति के तेज से दूर होकर अनन्त विनाश का दण्ड पाएंगे (पद 9)।

एक बार पतरस ने बहुत भयानक बात कही थी कि, "क्योंकि वह समय आ पहुंचा है कि पहिले परमेश्वर के लोगों का न्याय किया जाए, और जब कि न्याय का आरंभ हम ही से (यानी मसीहीयों से) होगा तो उनका क्या अन्त होगा जो परमेश्वर के सुसमाचार को नहीं मानते?" (1 पतरस 4:17)। मसीही लोगों का यह कर्तव्य है कि बहुतो को आग में से झपट कर निकालें" (यहूदा 23)। मसीही लोगों को पाप में डूब रहे लोगों को सुसमाचार बताना है।

बाइबल में हमें खोजे के बारे में पढ़ते हैं कि जब उसने सुसमाचार सुना तब उसने खुशी के साथ बपतिस्मा लिया। (प्रेरित 8:38-39)। जब कोई भी व्यक्ति बपतिस्मा लेता है तब यह कलीसिया के लिये प्रसन्नता का समय होता है। हमें उद्धार मिला है इसलिये एक मसीही होते हुए हमें लोगों को सुसमाचार सुनाकर बचाना है। पहिली शताब्दी में मसीहियों ने सब जगह जाकर प्रचार किया था (प्रेरितों 8:4)। उनका कई स्थानों पर विरोध भी हुआ था परन्तु वे सुसमाचार सुनाने से रूके नहीं। (प्रेरितों 4:17)। परन्तु फिर भी कई लोगों ने सुसमाचार सुनकर बपतिस्मा लिया। (प्रेरितो 5:14)।

परमेश्वर का प्रकाशन

सनी डेविड

मित्रो! कुछ ही समय पूर्व मेरे पास एक पत्र आया जिसमें यह प्रश्न लिखा था, कि बाइबल क्या धार्मिक पुस्तक है या विचारों का एक संग्रह है? बाइबल, वास्तव में, मनुष्य के लिये परमेश्वर की इच्छा का प्रकाशन है। इस पुस्तक में परमेश्वर ने मनुष्य के प्रति अपनी इच्छा को व्यक्त किया है। बाइबल हमें सृष्टि की उत्पत्ति, मानव के आदि इतिहास, मनुष्य के उद्देश्य और उसके भविष्य के बारे में बताती है। परमेश्वर ने इस पुस्तक को मनुष्य को इसलिये दिया है ताकि वह जाने कि वह परमेश्वर की रचना है, और चाहे वह कितना भी बड़े सा बड़ा अपराध क्यों न कर बैठे तौभी परमेश्वर उससे प्रेम करता है और उसे क्षमा करने को तैयार है। बाइबल के बिना, वास्तव में, मनुष्य बड़े ही अंधकार में होता, क्योंकि वह परमेश्वर की महानता और उसके प्रेम और उसकी उद्धार की योजना से अज्ञात होता। परन्तु परमेश्वर का धन्यवाद हो कि उसने मनुष्य को न केवल जीवन ही दिया है, किन्तु जीवन को बचाने का एक मार्ग भी प्रदान किया है, और उसी का वर्णन हमें बाइबल में मिलता है। यूं तो कहा

जा सकता है, कि बाइबल एक इतिहास की पुस्तक है, या बाइबल एक भूगोल की पुस्तक है; या बाइबल एक विज्ञान की पुस्तक है, और या बाइबल धार्मिक शिक्षाओं और उपदेशों का एक संग्रह है; परन्तु सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बाइबल ''परमेश्वर का वचन'' है। इस पुस्तक के द्वारा परमेश्वर आज भी मनुष्य से बातें करता है, वह इसके द्वारा हमें चेतावनी देता है, उपदेश और शिक्षाएं देता है, और उस मार्ग पर चलने की आज्ञा देता है जो मनुष्य को अनन्त जीवन की ओर ले जाता है।

इस थोड़े से समय में मैं आपका ध्यान बाइबल की कुछ मुख्य बातों के ऊपर दिलाना चाहता हूं। सबसे पहिले, बाइबल को पढ़कर हम यह देखते हैं कि आदि में परमेश्वर ने अपने वचन की सामर्थ से आकाश और पृथ्वी की सृष्टि की। आज हम आकाश और पृथ्वी पर जो कुछ भी देखते हैं वह सब परमेश्वर की सृष्टि है। परमेश्वर ने मनुष्य की भी रचना की, परन्तु मनुष्य की सृष्टि परमेश्वर ने बड़े ही विशेष रूप में की। बाइबल बताती है, कि परमेश्वर ने मनुष्य की देह की रचना मिट्टी से की और उसमें अपनी सामर्थ से जीवन फूंक दिया और यूं मनुष्य एक जीवता प्राणी बन गया। उसका शरीर तो पार्थिव था क्योंकि मिट्टी से रचा गया था, किन्तु उसका जीवन आत्मिक था क्योंकि वह उसे परमेश्वर की ओर से मिला था; और इस प्रकार परमेश्वर ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया। परमेश्वर के संसार में मनुष्य को सारी सुविधाएं उपलब्ध थी और वह परमेश्वर की उपस्थिति में रहता था।

परन्तु परमेश्वर की चेतावनी की कोई परवाह न करके एक दिन मनुष्य ने उसकी आज्ञा को तोड़ डाला, और इस प्रकार मनुष्य परमेश्वर की महिमा से गिर गया, सो जब मनुष्य ने देखा कि वह परमेश्वर की आज्ञा को तोड़कर पापी बन गया है, तो उसे परमेश्वर की चेतावनी का स्मरण आया और वह अपने आप को परमेश्वर से छिपाने का प्रयत्न करने लगा। परन्तु पाप और परिवत्रता एक साथ नहीं रह सकते, सो परमेश्वर ने मनुष्य को अपनी उपस्थिति में से निकाल दिया।

किन्तु, परमेश्वर मनुष्य से प्रेम रखता है, क्योंकि उसे उसने अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया था। वह मनुष्य को पाप के दण्ड से बचाना चाहता था, वह उसे फिर से अपनी उपस्थिति में लाना चाहता था। सो परमेश्वर ने अपनी उद्धार की योजना को मनुष्य पर प्रगट किया। उसने सबसे पहिले एक धर्मी मनुष्य को चुना और उस पर प्रगट करके बताया कि उसके वंश के द्वारा पृथ्वी पर सारे मनुष्यों के लिये एक उद्धारकर्ता जन्मेगा। फिर परमेश्वर ने उस मनुष्य के द्वारा एक जाति को उत्पन्न किया और उसके वंश को इस्राएल नाम दिया, अर्थात परमेश्वर की सामर्थ!। इस जाति के बीच परमेश्वर ने बड़े-बड़े अद्‌भुत काम किए, और उन्हें अपने मार्ग पर चलने के लिये एक व्यवस्था दी। यह व्यवस्था बाइबल का पहिला भाग है, और व्यवस्था की इन पुस्तकों को आज हम पुराना नियम कहते हैं। पुराने नियम में हम अनेकों भविष्यद्वक्ताओं के बारेमें पढ़ते हैं, जिन्होंने परमेश्वर का वचन प्राप्त करके उस चुने हुए वंश को समय-समय पर परमेश्वर की उस प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाया

जो उसने उनके पिता इब्राहीम से की थी। न केवल उन्होंने उस उद्धारकर्ता के जगत में आने का समाचार ही दिया, परन्तु यह भी प्रगट किया कि वह किस प्रकार जगत के लोगों का उद्धार करेगा।

बाइबल में पुराने नियम की पुस्कों को पढ़ने के बाद जब हम नए नियम की पुस्तकों को पढ़ना आरंभ करते हैं, तो हम देखते हैं कि परमेश्वर की प्रतिज्ञा और योजना अनुसार, आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व, जगत के उद्धारकर्ता का जन्म हुआ। उसका जन्म बड़े ही अद्‌भुत ढंग से परमेश्वर की सामर्थ से हुआ। जब उसका जन्म हुआ तो एक स्वर्गदूत ने लोगों के एक झुंड पर प्रगट होकर कहा कि ''मैं तुम्हें बड़े आनन्द का सुसमाचार सुनाता हूं जो सब लोगों के लिये होगा। कि आज दाऊद के नगर में तुम्हारे लिये एक उद्धारकर्ता जन्मा है, और यही मसीह प्रभु है..... तब एकाएक उस स्वर्गदूत के साथ स्वर्गदूतों का एक दल परमेश्वर की स्तुति करते हुए और यह कहते दिखाई दिया। कि आकाश में परमेश्वर की महिमा और पृथ्वी पर उन मनुष्यों में जिनसे वह प्रसन्न है शांति हो।'' (लूका 2:10:14)।

यीशु का जीवन आरंभ से ही बड़ा अद्‌भुत था, वह बचपन से ही परमेश्वर की बातों में लीन था। बाइबल में हम उसके बारे में पढ़ते हैं कि वह बालक बढ़ता, और बलवन्त होता, और बुद्धि से परिपूर्ण होता गया; और परमेश्वर का अनुग्रह उस पर था। (लूका 2:40)। जब वह बड़ा हुआ तो उसने यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले के हाथ से यह कहकर बपतिस्मा लिया कि हमें इसी रीति से सब धार्मिकता को पूरा करना उचित है। (मत्ती 3:15)। जब वह बपतिस्मा लेकर पानी में से ऊपर आया, तो एकाएक आकाश खुल गया और यह आकाशवाणी हुई; कि यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं अत्यंत प्रसन्न हूं। (मत्ती 3; 16, 17)। और यहां से यीशु ने अपने उस काम को आरंभ किया जिसे पूरा करने को वह स्वर्ग से पृथ्वी पर आया था।

उसने उपदेश दिए, शिक्षाएं दीं, और लोगों की हर प्रकार की बीमारी को चंगा किया। उसके हल्के से स्पर्श से कोढ़ी चंगे हो जाते थे, अंधे देखने और अंगड़े चलने लगते थे। उसकी आवाज सुनकर मुर्दे जी उठते थे और तूफान थम जाते थे। परन्तु तौभी उसमें कुछ घमण्ड न था। वह दीन था और एक दास की नाई लोगों की सेवा करता था वह पापियों के साथ रहता था और उनके बीच में परमेश्वर की सामर्थ के काम करता था। परन्तु वे लोग जो अपने आप को धर्मी समझते थे उससे ईर्ष्या करते थे, वे कहते थे कि यदि तू परमेश्वर का पुत्र है, तो पापियों के साथ क्यों रहता है? परन्तु यीशु का जवाब यह था कि ''वैद्य भले चंगों को नहीं परन्तु बीमारों को आवश्यक है।'' (मत्ती 9:12)। उसने कहा, कि मैं पापियों को ढूंढ़ने और उनका उद्धार करने आया हूं'' (लूका 19:10)।

परन्तु तत्पश्चात यीशु ने लोगों पर यह प्रगट करना आरंभ कर दिया, कि बहुत ही जल्द वह अपने शत्रुओं के हाथों पकड़वाया जाएगा और क्रूस के ऊपर लटकाकर मार डाला जाएगा। किन्तु उसने कहा, पिता इसलिये मुझसे प्रेम रखता है, कि मैं अपना प्राण देता हूं, कि उसे फिर ले लूं। कोई उसे मुझ से छीनता नहीं वरन मैं उसे आप ही देता हूं, मुझे उसे देने का भी अधिकार है, और उसे फिर लेने का

भी अधिकार है, वह आज्ञा मेरे पिता से मुझे मिली है।'' (यूहन्ना 10:17, 18)।

और इस प्रकार, पिता की आज्ञा, योजना और होनहार के ज्ञान के अनुसार यीशु ने अपने आपको अपने शत्रुओं के हाथ सौंप दिया, और उन्होंने लेकर उसे क्रूस पर चढ़ाकर मार डाला। परन्तु, परमेश्वर क्यों चाहता था कि यीशु इस तरह मार डाला जाएगा बाइबल बताती है, कि परमेश्वर ने यीशु को वास्तव में क्योंकि जगत में भेजा था। संसार पाप के श्राप के नीचे था, परन्तु परमेश्वर मनुष्य को पाप से मुक्ति दिलाकर अपने पास बुलाना चाहता था। सो उसने पाप के बैर को नाश करने के लिये यीशु को बलिदान के रूप में दे दिया। परमेश्वर के ज्ञान के अनुसार, यीशु ने क्रूस पर जगत के सारे लोगों के लिये अपने प्राणों को बलिदान किया। उसमें स्वयं तो कोई पाप न था, परन्तु परमेश्वर ने संसार के सारे पापों के कारण उसे दण्डित किया; वह हर एक मनुष्य के पाप के बदले में मारा गया। बाइबल कहती है, वह आप ही हमारे पापों को अपनी देह पर लिये हुए क्रूस पर चढ़ गया, जिस से हम पापों के लिये मर करके धार्मिकता के लिये जीवन बिताएं उसी के मार खाने से तुम चंगे हुए। (1 पतरस 2:24)। जो पाप से अज्ञात था, उसी को उसने हमारे लिये पाप ठहराया कि हम उसमें होकर परमेश्वर की धार्मिकता बन जाएं। (2 कुरिन्थियों 5:21)। वास्तव में, परमेश्वर का प्रेम कितना अपार है। उसका ज्ञान कितना महान है। वह नहीं चाहता कि कोई भी मनुष्य नाश हो, परन्तु उसकी इच्छा है कि सब मनुष्य अपना मन फिराकर उसके पुत्र यीशु के द्वारा अनन्त जीवन प्राप्त करें।

बाइबल बताती है कि अपनी मृत्यु के तीन दिन बाद यीशु फिर से जी उठा, क्योंकि यह अनहोना था कि वह उसके वश में रहता। क्योंकि वह परमेश्वर का पुत्र है। (प्रेरितों 2:24)। और चालीस दिन तक पृथ्वी पर रहने के बाद वह फिर से स्वर्ग पर उठा लिया गया। (प्रेरितों 1:9)। परन्तु स्वर्ग पर जाने से पहिले उसने पाप से छूटकर उद्धार में प्रवेश करने के मार्ग को, बताकर कहा, कि पृथ्वी पर जो कोई भी मनुष्य इस सुसमाचार पर विश्वास करेगा कि यीशु मेरे पाप के बदले में बलिदान हुआ, और पाप से अपना मन फिराएगा, और बपतिस्मे के द्वारा जल के भीतर अपने पापों की क्षमा के लिये गाड़ा जाएगा, तो उसका उद्धार होगा, और वह अपने अधर्म से छूटकर, परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करेगा। (मरकुस 16:15, 16; लूका 24:46-49; यूहन्ना 3, 5; प्रेरितों 2:38-47)।

प्रभु यीशु का यह सुसमाचार संसार के सारे लोगों के लिये है, क्योंकि यीशु का बलिदान सम्पूर्ण मानव जाति के लिये था। बाइबल हमें बताती है, क्योंकि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम रखा कि उस ने अपना एकलौता पुत्र दे दिया, ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे, वह नाश न हो, परन्तु अनन्त जीवन पाए। (यूहन्ना 3:16)। मित्रो, मेरा आपसे निवेदन है, कि आप परमेश्वर के इस प्रेमपूर्ण निमंत्रण को पूरी गंभीरता के साथ स्वीकार करके, यीशु के द्वारा अपना मेल परमेश्वर के साथ कर लें। परमेश्वर आपसे प्रेम करता है, वह आपको बचाना चाहता है, और यीशु ने आपके छुटकारे का पूरा दाम कर दिया है। मेरी आशा है कि आप जल्दी ही निश्चय करेंगे। परमेश्वर की आशीष आप पर दिन प्रतिदिन होती रहे।

उद्धार करने वाला विश्वास

जे. सी. चोट

अपने इस अध्ययन में हम देखेंगे कि विश्वास करना कितना आवश्यक है तथा उद्धार करने वाला विश्वास कैसा होता है? बाइबल से हम सीखेंगे कि उद्धार करने वाला विश्वास कैसा होता है? हम उस विश्वास की बात कर रहे हैं जो इन पर अधारित है। जो भी हम मसीहीयत में करते है वह बाइबल अनुसार होना चाहिए। यह वो विश्वास है जो बाइबल पर आधारित है। (इफि. 4:15)। विश्वास के बारे में बहुत सी आयतें हैं जैसे कि रोमियों 1:8, 10:8; 1 थिस्स 1:3, विश्वास को पकड़े रहो। (यहुदा 3)।

एक विश्वास व्यक्तिगत विश्वास होता है और वो है परमेश्वर की आज्ञा को स्वीकार करना तथा यह अंगीकार करना कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है। हमें उसके वचन पर विश्वास करना चाहिए। यह एक ऐसा विश्वास है जो पक्का भरोसा दिखाता है। जिस प्रकार से इब्रानियों का लेखक कहता है, ''अब विश्वास आशा की हुई वस्तुओं का निश्चय और अनदेखी वस्तुओं का प्रमाण है।'' (इब्रानियों 11:1)। हम इसे इस प्रकार से कह सकते है जैसे कि परमेश्वर को बिना देखें हम विश्वास करते है कि वह है क्योंकि हमारे आसपास प्राकृति के सारे प्रमाण है। हमने यीशु को देखा नहीं परन्तु प्रमाण बताते है कि यीशु संसार में आया था, और किस प्रकार से पृथ्वी पर वह लोगों के बीच रहा था तथा इन सब प्रमाणों को देखने के बाद हमें पता चलता है कि एक परमेश्वर है जिस पर हमारा भरोसा है।

इस प्रकार का भरोसा हमें परमेश्वर तथा यीशु में विश्वास करने की ओर अग्रसर करता है। यह विश्वास अंधा तथा मरा हुआ नहीं है। परन्तु यह एक ऐसा विश्वास है जो हमारे मन से शुरू होता है और समाप्त नहीं होता। यह एक ऐसा विश्वास होगा, कि परमेश्वर द्वारा दी गयी आज्ञा हमेशा मानने के लिये तैयार होगा। एक जीवित विश्वास उद्धार करने वाला विश्वास है। वो विश्वास जिसके विषय में प्रेरित पौलुस ने कुरिन्थियों 13 अध्याय में वर्णन किया है, वह कहता है, यदि कोई कहे कि मैं पहाड़ों को हटा सकता हूं परन्तु विश्वास न रखे तो वह कुछ भी नहीं है। यह इस प्रकार से है जैसे कोई कहे कि मैं परमेश्वर से प्रेम रखता हूं और उसकी आज्ञा को नहीं मानता वो उसका विश्वास व्यर्थ है। जैसे कि याकूब कहता है, ''हे मेरे भाईयों यदि कोई कहे कि मुझे विश्वास है पर वह कर्म न करता हो, तो उसे क्या लाभ? क्या ऐसा विश्वास कभी उसका उद्धार कर सकता है? वैसे ही विश्वास भी यदि कर्म सहित न हो तो अपने स्वभाव में मरा हुआ है।'' (याकूब 2:14 और 17)।

बाइबल कही पर भी यह नहीं बताती कि उद्धार केवल विश्वास के द्वारा होता है। बाइबल हमें यह बताती है कि विश्वास के साथ कार्य भी आवश्यक है। याकूब अपनी पत्री में बताता है ''सो तुमने देख लिया कि मनुष्य केवल विश्वास से नहीं वरन कर्मों से भी धर्मी ठहरता है।'' (याकूब 2:24)। फिर 26 पद में वह कहता है, ''निदान जैसे देह आत्मा बिना मरी हुई है वैसा ही विश्वास भी कर्म बिना मरा हुआ

है। परन्तु क्या इसका अर्थ यह हुआ कि हमारा उद्धार कर्मो के द्वारा होता है? नहीं ऐसा नहीं है। यह पद हमें यह नहीं सिखाते कि मनुष्य केवल कर्मो से नहीं धर्मी ठहरता। हमारा उद्धार तब होता है जब हम पूर्ण रूप से परमेश्वर की आज्ञा मानते है। ऐसे विश्वास को कार्यशील विश्वास कहते है।

अब एक और बात को देखते हैं जिसमें विश्वास कार्यशील होता है। और ऐसे विश्वास के द्वारा उद्धार होता है। पौलुस रोमियों 10:17 में कहता है। ''सो विश्वास सुनने से और सुनना मसीह के वचन से होता है।'' एक व्यक्ति को जब यह विश्वास हो जाता है कि एक परमेश्वर है जिसने सारी सृष्टि की रचना की है, तब वह यह सुनता है कि उसकी आज्ञा मेरे लिये क्या है, जैसे कि बाइबल बताती है यानि जब वह वचन को पढ़ता या सुनता है तब उसके अंदर विश्वास उत्पन्न होता है। वह परमेश्वर तथा उसके पुत्र यीशु और उसके बलिदान के बारे में सुनता है तब वह विश्वास करने लगता है जैसे कि इब्रानियों का लेखक भी कहता है कि बिना विश्वास के उसे प्रसन करना अनहोना है। (इब्रानियों 11:6)। यीशु ने कहा था, ''तुम्हारा मन व्याकुल न हो, तुम परमेश्वर पर विश्वास करते हो मुझ पर भी रखो'' (यूहन्ना 14:1)। पौलुस कहता है? ''क्योंकि धार्मिकता के लिये मन से विश्वास किया जाताहै और उद्धार के लिये मुंह से अंगीकार किया जाता है।'' (रोमियों 10:10)। यहां हम आवश्यक बात यह देखते हैं कि विश्वास उद्धार के लिये बहुत जरूरी है। यानि विश्वास और अंगीकार हमें उद्धार की ओर ले जाते है। केवल अंगीकार करने से उद्धार नहीं होता। विश्वास के अतिरिक्त एक और बात अति आवश्यक है और वो है मन फिराना यानि पापों से मन फिराना। यीशु ने कहा था? ''परन्तु यदि तुम मन न फिराओगे तो तुम सब भी इसी रीति से नाश होगे।'' (लूका 13:3)। परमेश्वर प्रत्येक स्थान पर चाहता है कि लोग अपना मन, फिराये। (प्रेरितों 17:30)। पतरस ने कहा था कि ''मन फिराओ और बपतिस्मा लो'' (प्रेरितों 2:38)।

हमें अंगीकार भी करना है कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है। (मत्ति 10:32)। (प्रेरितों 8:37)। हमें बपतिस्मा लेना है जैसे कि यीशु ने कहा था, ''जो विश्वास करे और बपतिस्मा ली उसी का उद्धार होगा।'' (मरकुस 16:16)। उद्धार करने वाला विश्वास कार्यशील विश्वास होता है।

केवल नाम से ही बात नहीं बनेगी

ब्रायन डब्ल्यू. जोनस

मैं उसी कलीसिया में होना चाहता हूं जिसका नाम बाइबल में मिलता हो। मैं उसी कलीसिया में ही होना चाहता हूं जो मसीह की शिक्षाओं को मानती हो। केवल नाम से ही बात नहीं बनेगी। बहुत से लोगों का कहना होता है कि कलीसिया के नाम से कोई फर्क नहीं पड़ता। परन्तु कलीसिया के लिए वचन में बताई गई कलीसिया होने के लिए उसका सही नाम होना और परमेश्वर के सारे अभिप्राय को बताना आवश्यक है।

कलीसिया मसीह की दुल्हन है (प्रकाशितवाक्य 21:2)। दुल्हन को दूल्हे का नाम मिलना चाहिए। बपतिस्मा लेने पर हम परमेश्वर के परिवार के सदस्य बन जाते हैं। (1 तीमुथियुस 3:15)। क्या उसके परिवार का नाम उसके नाम से नहीं होना चाहिए? कलीसिया को मसीह ने खरीदा है (प्रेरितों 20:28)। क्या किसी संस्था को खरीदने वाले को यह अधिकार नहीं होता कि उसे उसका नाम मिले।

बाइबल "परमेश्वर की कलीसिया" (1 कुरिन्थियों 1:2); "पहिलौठे की कलीसिया" (इब्रानियों 12:23)। "मसीह की कलीसियाएं" (रोमियों 16:16); "मसीह की देह" (कुलुस्सियों 1:24); "मसीह की दुल्हन" (प्रकाशितवाक्य 21:2); "परमेश्वर का घराना" (1 तीमुथियुस 3:15) बाइबल कलीसिया के लिए कई विवरणात्मक नाम देती है। इन नामों में परमेश्वर और यीशु के नाम की महिमा होती है। ये कुछ नाम है जिन्हें परमेश्वर ने अपनी कलीसिया के लिए चुना है।

अगली बार जब कोई आपसे पूछे कि "नाम से क्या फर्क पड़ता" तो उस व्यक्ति को बिना हस्ताक्षर चेक देने की पेशकश करें। बिना अधिकृत नाम के चेक अमान्य होता है। क्या इसी प्रकार से यह सच नहीं है कि बिना उचित नाम के कलीसिया भी अमान्य होगी? चेक पर हस्ताक्षर सही होने के बावजूद खाते में पैसे न होने से चेक बाउंस हो जाता है। क्या उसी प्रकार से यह सच नहीं है कि कलीसिया का नाम तो सही हो, पर उसमें बाइबल की शिक्षा न पाई जा रही हो?

विवाह और घर के लिए परमेश्वर की योजना तथा ससुराल की समस्याएं सुलझाने से

कोय रोपर

विभिन्न समाजों में ससुराल पक्ष को अलग तरह से देखा जा सकता है। विशेषकर अमेरिका में तो इस बात पर बहुत से चुटकले पाए जाते हैं। परन्तु नव विवाहित दम्पत्ति के जीवन में ससुराल का हस्तक्षेप शायद मजाक की बात नहीं है। जब ससुराल वाले विवाहित बच्चे को या नई लाई गई बहु को बात-बात पर टोकते हैं तो विवादित जीवन में कई समस्याएं आ जाती हैं। हालात और भी खराब हो जाते हैं जब दम्पत्ति की इस बात पर सहमति नहीं बन पाती कि इस दखलअंदाजी का क्या किया जाए?

ससुराल वाले नव विवाहितों के जीवन में ताक-झांक न भी करें तो भी वे मतभेद का करण बन सकते हैं। उदाहरण के लिए दूल्हा-दुल्हन छुट्टियों में किसके यहां जाएंगे? नव विवाहित दम्पत्ति किस परिवार की रस्मों को मानेगा? इस तरह के सवाल परेशानी का कारण बन सकते हैं।

विवाह हो जाने पर (पति या पत्नी के अलावा) आपको जो एक चीज मिलती है, वह है ससुराल वाले आपके विवाहित जीवन पर एक बोझ सा बन सकते हैं, जब

तक आप और आपकी घरवाली बाइबल की शिक्षा के अनुसार सही ढंग से उनसे मिलना सीख नहीं जाते। आपको अपने ससुराल पक्ष के मामले में क्या करना चाहिए?

अपने ससुराल पक्ष के प्रति सकारात्मक रवैया अपनाएं

सबसे पहले आपको अपने ससुराल वालों के प्रति सकारात्मक रवैया अपनाना आवश्यक है। भारत की संस्कृति में ससुराल वाले विशेषकर सास को बिल्कुल गलत दृष्टिकोण से देखते हैं। फिर भी यह सोचने का कोई कारण नहीं है कि ससुराल में झगड़े अनिवार्य है। बाइबल में ससुराल वालों के साथ अच्छे संबंधों के कम से कम दो उदाहरण दिए गए हैं, नओमी और उसकी बहु रूत की खूबसूरत कहानी और मूसा और उसके ससुर यित्रो का विवरण। अपने विवाह का आरंभ इस निश्चय से करना कि मैं अपने पति के माता-पिता के साथ सकारात्मक संबंध रखूंगी, ससुराल की ओर झगड़े को आरंभ होने से पहले ही रोकने का अच्छा ढंग होगा।

आप अपने ससुराल वालों के प्रति सकारात्मक रवैया कैसे अपना सकते हैं? नीचे कुछ सुझाव दिए गए हैं :

(1) समझें कि आपका पति/आप की पत्नी अपने माता-पिता से प्रेम करता/करती है। उन लोगों से प्रेम करना सीखें, जो उसके लिए बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं जिससे आप प्रेम करते हैं। एक अच्छा नियम जो आप दोनों को मानना चाहिए वो है कि, "अपने पति या पत्नी के परिवार की कभी भी दूसरों से आलोचना न करें।" हो सकता है कि यदि आप अपने ससुराल वालों की अलोचना करें तो आपकी पत्नी या आपके पति को उसके बचाव के लिए बाध्य होना पड़े।

(2) याद रखें कि आपके पति/पत्नी के माता-पिता आपके भी माता-पिता हैं। आप अपने माता-पिता के साथ अपने/पत्नी से कैसा व्यवहार चाहेंगे? आपका उत्तर जो भी हो लेकिन सुनहरा नियम तो आपको यही सलाह देगा कि अपने साथी के माता-पिता के साथ आपका व्यवहार ऐसा ही होना चाहिए। आपका व्यवहार आपके ससुराल वालों के प्रति अच्छा होना चाहिए। दूसरे शब्दों में क्योंकि आप अपने साथी से प्रेम करते हैं क्योंकि आप अपने माता-पिता से प्रेम करते हैं।

(3) समझें कि आपको अपने पति/पत्नी में जो बातें अच्छी लगती हैं, वे ससुराल वालों की ही देन है। आपके प्रिय को सुन्दरता, शारीरिक गुण, और मानसिक योग्यता सब उन्हीं से ही मिली है। इसके साथ ही किस प्रकार से उन्होंने आपके पति या पत्नी का पालण-पोषण किया है जिससे वह ऐसा योग्य व्यक्ति बना, जिससे आपने विवाह किया। आमतौर पर आपको अपने ससुराल वालों का धन्यवादी होना चाहिए जो उन्होंने अपने बच्चे को अच्छी शिक्षा देकर ऐसा योग्य व्यक्ति बनाया जिसको आपने पसंद किया और जिससे प्रेम किया।

(4) समझने की कोशिश करें कि क्यों ससुराल वाले विशेषकर सास ऐसा व्यवहार करती है। अपने विवाह को अपनी सास की नजर से देखें। माता आमतौर पर पिता की अपेक्षा बच्चों के अधिक निकट होती है। जब उसके एक बच्चे का विवाह होता है, तो मां भावुक हो जाती है। उदाहरण के लिए जब कोई युवक विवाह करता है तो मां को इस बात की चिंता हो जाती है कि उसकी पत्नी उसका ध्यान उस प्रकार

नहीं रख पाएगी, जैसे वह स्वयं रखती थी। उसे इस बात का भी पता नहीं होता कि अब जब विवाह के बाद उसके जवान बच्चे ने घर छोड़ दिया है तो उसके जीवन में अब उसकी क्या भूमिका होगी। उसे अब इस बात का डर सताने लगता है कि अब उसकी बहु उसके बेटे के जीवन में उसकी जगह ले लेगी यानी अब वो अपनी मां से प्रेम नहीं करेगा। उसे इस बात की चिंता रहती है कि उसके विवाह का अर्थ है कि वह परिवार को छोड़ रहा है। अगर उसकी बेटी की शादी होने जा रही है तो वह (और उसका पति) इस बात की चिंता में रहता है कि जिससे वह शादी करने जा रहा हैं क्या वह उसके योग्य है भी कि नहीं।

नव विवाहित दम्पत्ति के लिए सब से बड़ी चुनौती है कि उन्हें इस डर को खत्म करना होगा और उदाहरण के लिए उन्हें दोनों ओर के माता-पिता को यह विश्वास दिलाना होगा कि वे उन से प्रेम करते हैं और उन्हें छोडेंगे नहीं। उन्हें अपने माता-पिता के साथ सहानुभूति रखनी चाहिए और उन्हें समझने की भरपूर कोशिश करनी चाहिए क्योंकि आने वाले बीस वर्षों में या उससे आगे जब उसके अपने बच्चे विवाह करेंगे तो उनके मनों में भी यही भावना आएगी।

(5) याद रखें कि विवाह के बाद आपको केवल पति या पत्नी ही नहीं मिलती बल्कि एक-एक पूरा परिवार मिलता है। आप उस परिवार का हिस्सा बनते हैं, और शायद आप अगले चालीस वर्षों तक उसका हिस्सा बने रह सकते हैं? उस समाज में परिवार के साथ आपका संबंध कैसा होगा? व्यावहारिक दृष्टिकोण से सभी संबंधित लोगों को चाहिए कि अपने ससुराल पक्ष को साथ लेकर चलें। झगड़े और क्लेश में बिताए गए चालीस वर्षों के बजाय प्रेम और शांति में बिताए चालीस वर्ष अधिक सुखद होंगे।

अपने माता-पिता से अलग अपना अपना स्वयं का घर बसाएं

विवाह होने पर आप यह संकेत देते हैं कि अब आप बड़े हो गए हैं और आप अपने माता-पिता के बिना अपना दैनिक जीवन चलाने के लिए तैयार है। यीशु ने कहा कि विवाह के बाद पुरुष "अपने माता-पिता से अलग होकर अपनी पत्नी के साथ मिला रहे" (मत्ती 19:5) माता-पिता से अलग होने का अर्थ है कि अपने उनसे अपनी स्वतंत्रता का ऐलान कर दिया है और आप और आपकी पत्नी, उन घरों से अलग आप दोनों पले-बढ़ें और आप अपना घर बसाएंगे।

स्वतंत्रता का अर्थ जो है

संसार के बहुत से भागों में आज दम्पत्ति के रूप में अपने आप को अलग स्थापित करने का अर्थहै कि आप अपने माता-पिता से अलग रहेंगे। चाहे, नवविवाहित दम्पत्ति के रूप में आप और आपका साथी किसी एक के माता-पिता के साथ रहने का निर्णय करते हैं, तब भी आपको अपने आपको स्वतंत्र ही मानना चाहिए यानि एक आत्म निर्भर और दोनों के बचपन के परिवारों से स्वतंत्र परिवार।

आपके नए परिवार की आत्मनिर्भरता में निम्न बातें होनी चाहिए।

(1) आर्थिक स्वतंत्रता आप अपनी आर्थिक भलाई के स्वयं जिम्मेदार होंगे।

(2) इच्छा की स्वतंत्रता आप अपने निर्णय जब स्वयं लेंगे, अपने माता-पिता की

इच्छा की परवाह किए बिना।

(3) भावुक स्वतंत्रता आपको भावनात्मक समर्थन पाने के लिए अपने माता-पिता के बजाय एक-दूसरे पर निर्भर होना चाहिए।

(4) भौतिक स्वतंत्रता परिस्थितियों के अनुकूल यह आपकी इच्छा है आप अपने माता-पिता के साथ समय बिताएं या न बिताएं।

स्वतंत्रता आपको जो करने से रोकेगी

जब आपका विवाह हो और आप सचमुच अपने माता-पिता को छोड़ दें तो कुछ ऐसी बातें होंगी, जो आप नहीं करेंगे। उदाहरण के लिए युवा पत्नी के रूप में जब भी आपके और आपके पति में कोई तकरार होगी, तो आप हर बार रोती हुए अपनी मां के पास नहीं जाएंगी, और आप अपने पति की तुलना अपने पिता से भी नहीं करेंगी। एक पति होने के नाते आप अपनी मां को कभी भी यह अनुमति नहीं देंगे कि वह आपको या आपकी पत्नी को नीचा दिखाए। इससे भी बढ़कर आप अपनी पत्नी की आलोचना इस बात के लिए नहीं करेंगे। कि वह अपनी मां की तरह स्वादिष्ट खाना नहीं बनाती, या आपकी मां की तरह घर को साफ-सुथरा नहीं रखती। आपकी मां की खाना पकाने और सफाई की कला उस बीते समय की बात है, जो अपने पीछे छोड़ दिया है। अब आपका यह दायित्व बनता है कि आप अपनी पत्नी को प्रोत्साहित करें अपनी मां की नकल बनने के लिए नहीं, बल्कि एक अच्छी पत्नी बनने के लिए, जो वह बन सकती है तथा जो कुछ भी वह करे उसमें खुख रहें, चाहे वह उसे आपकी मां की तरह करे या न करे।

स्वतंत्रता से जो मिलता है

यह कथन कि आपने और आपकी पत्नी ने एक नया अलग और आत्मनिर्भर घर बनाया है जिसका अर्थ होगा कि एक दम्पत्ति होने के नाते यह आप की इच्छा है कि आप किस परिवार की परम्पराओं को मानेंगे। आप कुछ अपने बचपन के परिवारों से अलग ले सकते हैं या आप अपनी स्वयं की नई परम्पराएं बना सकते हैं। अन्त में आपके परिवार के रीति रिवाज आप दोनों के बचपन के परिवारों और स्वयं नए और अलग अपने-अपने द्वारा बनाए गए रीति-रिवाजों का मिश्रण होगा।

दोनों ओर के माता-पिता से अधिक अपने पति या पत्नी को महत्व दें

विवाह हो जाने पर, आप और आपका पति या पत्नी अपने माता-पिता से तो प्रेम करते रहेंगे ही, दोनों को अपने पति या पत्नी के माता-पिता से भी प्रेम करना आवश्यक है, पर दोनों को अपने माता-पिता से अधिक एक-दूसरे से प्रेम करना आवश्यक हैं और अपने जीवन में लोगों से प्रेम करते रहना बुरी बात नहीं है। आप अपने जीवन में कई लोगों से प्रेम कर सकते हैं, लेकिन आपको किसी दूसरे को उसी तरह से उतना ही प्रेम करना चाहिए जितना आप अपने पति या पत्नी से करते हैं।

अगर आप अपने विवाह के साथी से सबसे अधिक प्रेम करते हैं, अपने माता-पिता से भी अधिक, तो जब आपके बड़े परिवार में कोई झगड़ा होने पर आपको अपनी पत्नी का ही पक्ष लेना आवश्यक है। अगर आपके माता-पिता आपके पति या पत्नी की आलोचना करते हैं तो आप उस अलोचना में भागीदार न बनें,

बल्कि आप उसके पक्ष में खड़े हों। जब आप के माता-पिता आपको कुछ और करने को कहेंगे और पत्नी कुछ और तो आप वहीं करेंगे जो आपकी पत्नी कहेगी। यदि सामान्य परिस्थिति में आपसे पूछा जाए कि आप माता-पिता के साथ हैं या पत्नी में से किसके साथ समय बिताना पसंद करेंगे तो आप पत्नी के साथ ही समय बिताना चुनेंगे।

दोनों ओर से माता-पिता के साथ ठीक व्यवहार करें यानि लड़की वाले और लड़के वाले दोनों एक दूसरे से अच्छा व्यवहार करें।

आपकी पहली जिम्मेदारी है कि आप सब के साथ अच्छा व्यवहार करें (अपने सास-ससुर के साथ भी) जैसाकि एक मसीही का होना चाहिए। इस तरह आप कोशिश करेंगे कि आप दोनों ओर के माता-पिता से प्रेम करेंगे और दया की भावना रखें, उनकी मदद करें और यह सब बिना किसी स्वार्थ के करें। यदि आपको यह विश्वास हैं कि आपके ससुराल वाले आपको पसंद नहीं करते और आपके साथ बुरा व्यवहार करते हैं। चाहे आप उन्हें अपने दुश्मन ही समझें फिर भी आप मसीह के नमूनों और निर्देशों पर चलेंगे।

(1) उनसे प्रेम करें, क्योंकि यीशु ने कहा, "अपने शत्रुओं से प्रेम करो" (मत्ती 5:44)। **(2)** उन्हें क्षमा करें जैसे परमेश्वर ने मसीह में आपको क्षमा किया (इफिसियों 5:32)। **(3)** उनके साथ भलाई ही करें, बुराई के बदले बुराई नहीं, बल्कि बुराई के बदले भलाई (रोमियों 12:20, 21)।

माता-पिता (दोनों ओर के) प्रति व्यवहार का हिस्सा यह भी देखना है कि उनके लिए क्या भला है, विशेषकर उनकी आवश्यकताओं को समझना और उन्हें पूरा करने की कोशिश करना। उदाहरण के लिए एक पति होने के नाते आप यह सोच सकते हैं कि आपकी पत्नी अब केवल आपकी है और आपको उसे किसी के साथ बांटने की आवश्यकता नहीं है लेकिन प्रेम आपको यह सोचने पर विवश करेगा कि उसके माता-पिता को भी कभी-कभी अपनी बेटी से मिलने की आवश्यकता है। इस तरह आप खुशी-खुशी समय-समय पर अपनी पत्नी को उसके साथ बांटेंगे।

आपको दोनों तरफ से माता-पिता से अच्छा व्यवहार करना चाहिए। जिसका अर्थ है कि अगर हो सके तो आप अपना समय और ध्यान अपने माता-पिता और अपने सास-ससुर के बीच एक समान बांटेंगे। जब आपको और आपकी पत्नी को यह समझने में मुश्किल आए कि सही क्या है किससे कब मिलना चाहिए तब आपको "झगड़ों को सुलझाने" पर पुस्तक से कुछ सलाह लेनी चाहिए।

वयस्क बच्चों की जिम्मेदारी है कि अपने माता-पिता का ध्यान रखें

बाइबल सिखाती है कि जब माता-पिता बूढ़े हो जाएं या अपना ध्यान रखने में असमर्थ हो, तब बच्चों का दायित्व हैं कि वे उनका ध्यान रखें। यीशु ने मत्ती 15:1-9 में "माता-पिता का आदर करने" और उन्हें आर्थिक सहायता देने के लिए कहा है। ऐसा समय भी आ सकता है जब आपको और आपकी पत्नी को दोनों ओर के माता-पिता की देखभाल का प्रबंध करना पड़े।

हमारा परमेश्वर प्रेमी है

जेम्स ई. प्रीस्ट

"हमारा परमेश्वर सदाचारी है" इस पाठ में हमने सीखा था कि पवित्रता परमेश्वर का सर्वश्रेष्ठ मुख्य गुण है और हमें भी वैसे ही पवित्र बनने के लिए बुलाया गया है जैसे वह पवित्र है। परमेश्वर के सभी गुणों की तरह, यह गुण भी उसके ईश्वरीय संभाव की विशेषता है। इसे परमेश्वर से अलग होकर नहीं पाया जा सकता। यह हम पर उसके सभी प्रदर्शनों का आधार है। सदाचारी रूप में कार्य करने का यह उसका स्वभाव है क्योंकि वह पवित्र है।

परमेश्वर का एक और गुण प्रेम है। पवित्रता की तरह, प्रेम भी पूर्ण रूप से केवल परमेश्वर में ही दिखाई देता है। प्रेम करना परमेश्वर के स्वभाव का ऐसा भी है कि हम पढ़ते है, "परमेश्वर प्रेम है" (1 यूहन्ना 4:8)।

उसके प्रेम का वर्णन

परमेश्वर के सिद्ध की बात करना मनुष्यों के लिए कठिन है। हमारे लिए किसी सम्पूर्ण वस्तु की बात करना कठिन होता है। सम्पूर्णता के विषय में पूरी बातचीत में, हम अपनी त्रुटियों को बड़े कष्टददायक ढंग से जानते हैं। कितनी बार हमने किसी की बातों कार्यों या उद्देश्यों से किसी दूसरे को यह करते हुए सुना होगा, "मैं तो दूध का धुला नहीं हूं, पर..."।

"सदगुण" वाला होने की बात पर, हमें सभी की गलतियां दिखाई देती हैं। यह बात हर किसी के लिए सच है। पूरे इतिहास में सदगुण बनने की बात यह बड़ी दिलचस्प विषय रही है। चौथी शताब्दी ई. पू. के यूनानी लोग बुद्धि, साहस, धैर्य तथा न्याय को चार शारीरिक गुण मानते थे। मसीही काल के मध्य युग के दौरान विद्वानों में ऊपर लिखित मानको जाता था।

सदगुणी होने की व्याख्या करने में बाइबल कहीं अधिक व्यापक है। हम दाऊद की वेदनापूर्ण पुकार से इसका संबंध जोड़ सकते हैं, "हे परमेश्वर मुझ में एक शुद्ध मन बना दे।" हम पतरस के शब्दों को सुन सकते हैं जब वह "यीशु के पांवों पर गिरा, और कहा, हे प्रभु, मेरे पास से जा, क्योंकि मैं पापी मनुष्य हूं" (लूका 5:8)। ध्यान दें कि नये नियम की दो मुख्य सूचियों में जहां मसीही गुणों पर जोर दिया गया है, वहां सदगुण तथा प्रेम का संबंध कितना गहरा है,

निदान, हे भाइयों जो जो बातें सत्य हैं, और जो जो बातें आदरणीय हैं, और जो जो बातें उचित हैं, और जो जो बातें पवित्र हैं, और जो जो बातें सुहावनी हैं, और जो जो मनभावनी है, निदान, जो जो सदगुण और प्रशंसा की बातें हैं उन्हीं पर ध्यान लगाया करो (फिलिप्पयों 4:8)।

और इसी कारण तुम सब प्रकार का यत्न करके, अपने विश्वास पर सदगुण और सदगुण पर समझ और समझ पर संयम, और संयम पर धीरज और धीरज पर भक्ति और भक्ति पर भाईचारे की प्रीति और भाईचारे की प्रीति पर प्रेम बढ़ाते जाओ (2 पतरस 1:5-7)।

सदाचार व प्रेम को साथ-साथ रखकर हमें उस महान तथा भली संगति में शामिल होना हैं मसीही होने के नाते हमारे सामने यह एक चुनौती की तरह है।

अपर्याप्तता की हमारी सामान्य भावना दो कारणों से होती है। पहला हम ऐसे संसार में रहते हैं जिसके अधिकतर भाग में प्रेम शब्द के अर्थ का ज्ञान नहीं रहा है। हमारी भाषा हमारे साथ विश्वासघात करती है क्योंकि अपने प्रेम को व्यक्त करने के लिए कई बार हम इस प्रकार के वाक्यों का प्रयोग करते हैं, "मुझे आइसक्रीम अच्छी लगती है", मैं परमेश्वर से प्रेम करता हूं, मैं तुम से प्रेम करता हूं और तुम्हारे बिना रह नहीं सकता, मुझे ऊपर की अदृश्य बातों की कहानी बताना अच्छा लगता है, मुझे अपनी गाड़ी से प्रेम है। दूसरा वस्तुओं तथा लोगों से प्रेम में अपने संबंध की समझ की कमी के कारण हम परमेश्वर के प्रेम से हक्के-भक्के रह जाते हैं। यह भेद तो सचमुच बहुत बड़ा है ही, परन्तु मानवीय स्तर पर प्रेम के अर्थ को भूलकर हम उसे परमेश्वर के स्तर पर समझने की आशा कैसे कर सकते हैं?

आशा देकर निराश करने वाले इस प्रश्न का पूरा ज्ञान पाने का मार्ग है, क्योंकि पौलुस ने प्रार्थना की, "कि तुम प्रेम में जड़ पकड़कर और नेव डाल कर सब पवित्र लोगों के साथ भली भांति समझने की शक्ति पाओ, कि उसकी चौड़ाई और लम्बाई और ऊंचाई और गहराई कितनी है और मसीह के उस प्रेम को जान सको जो ज्ञान से परे है, कि तुम परमेश्वर की सारी भरपूरी तक परिपूर्ण हो जाओ" (इफिसियों 3:17ख-19)।

इसमें तीन बातें हमारे करने के लिए है, प्रार्थना, वचन का अध्ययन तथा कर्म करना। परमेश्वर के वचन की कोई भी खोज जो हमें प्रार्थना में घुटनों तक नहीं ले जाती, अन्त में असफल ही होगी। सफलतापूर्वक खोज के लिए विनम्र तथा खोजपूर्ण प्रार्थना आवश्यक है। परन्तु, प्रार्थना ही काफी नहीं है।

परमेश्वर के प्रेम को अच्छी तरह समझने के लिए हमें उसके वचन का अध्ययन करना आवश्यक है। उसका वचन हमारी शिक्षा के लिए दिया गया है (रोमियों 15:4) और परमेश्वर के मार्ग को जानने के लिए हमारे लिए इसका अध्ययन करना आवश्यक है (2 तीमुथियुस 3:15) हम पहले ही परमेश्वर की नैतिक श्रेष्ठता, स्र्वव्यापकता, सर्वज्ञता तथा सर्वशक्तिशालिता पर जोर दे चुके हैं। परमेश्वर के लोगों द्वारा उसके प्रेम को अनन्त अर्थात अनादि सदा तक रहने वाला कहा गया है (1 राजा 10:9; यिर्मयाह 31:3; रोमियों 8:35-39)।

परमेश्वर के प्रेम के अनन्त स्वभाव से एक प्रश्न उठता है कि मनुष्य को बनाने से पहले परमेश्वर किस से प्रेम करता था। समय से पूर्व अर्थात जिसमें हम अपने आपको पाते हैं, अनन्तकाल था और वहां परमेश्वर भी था (यशायाह 57:15)। हमारे सामने एक प्रासंगिक प्रश्न है और उसका उत्तर निर्णायक है। यह प्रश्न प्रासंगिक इसलिए है क्योंकि, इसका अर्थ अवश्य ही प्रेम की बात है। इसका उत्तर निर्णायक इसलिए है क्योंक यह परमेश्वरत्व के व्यक्तियों को शामिल करता है। परमेश्वर का सिद्ध प्रेम सृष्टि से भी पहले था, इसलिए हम निष्कर्ष निकालते हैं कि यह प्रेम पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के बीच बिना किसी रोक-टोक के अपने आपको सिद्ध करता

है। यीशु ने पिता से प्रार्थना करते हुए इस बात का यह कहकर संकेत दिया, "तू ने जगत की उत्पत्ति से पहिले मुझसे प्रेम रखा" (यूहन्ना 17:24ख)। फिर, सृष्टि से स्वतंत्र परमेश्वर पूरी तरह से अपने आप से संप्रेषण, अपने आप के प्रति पूर्ण समर्पण व पूर्ण प्रकटीकरण रखता है।

पूर्ण अर्थ में यह परमेश्वर का भयपूर्ण प्रेम है। पवित्र त्रिएक के संदर्भ के अन्दर ही सम्पूर्ण एकता, अनन्त शांति, शानदार स्वेच्छा, शांत अपरिवर्तनीयता तथा पवित्र कृपा विद्यमान है। परमेश्वर का सिद्ध प्रेम यही है; उसके प्रेम की बात उसके अन्दर ही है।

उसका प्रेम आगे दिया जाता है

परमेश्वर अपने महान प्रेम को अपने तक ही सीमित नहीं रखता, बल्कि यह इसे आगे भी फैलाता है। अर्थात उसके प्रेम का पात्र अपने आपसे बाहर भी हो सकता है। जैसे जीवित परमेश्वर हमें जीवन देता है और सिद्ध परमेश्वर हमें सच्चाई देता है, वैसे ही प्रेमी परमेश्वर हमें अपने आपको ही देता है। अपने लिए परमेश्वर के प्रेम के उंडेले जाने पर विचार करने पर हमें अहसास होता है कि हमें अपने साथियों में यह प्रेम नहीं मिलता है। हम परमेश्वर की भयदायक शक्ति, गहन ज्ञान तथा अन्तरंग उपस्थिति के बारे में विचार करके शांति पा सकते हैं क्योंकि हमें आश्वासन है कि ये सभी गुण उसकी पवित्रता, शुद्धता नैतिकता तथा आचारों की छतरी के नीचे काम में लगे हुए हैं। इस अहसास से कि परमेश्वर प्रेम करने वाला है, हमें शांति मिल सकती है, क्योंकि परमेश्वर का प्रेम उसकी पवित्रता को दिखाता है।

यह जानकर कि हमें ऐसा प्रेमी परमेश्वर मिला है हम बहुत ही प्रभावित और सच्चे मन से उसका धन्यवाद करते हैं। परन्तु हमारे लिए उसके प्रेम तथा उसके प्रति हमारे प्रेम में इतने बड़े अन्तर से हम अभी उलझन में हो सकते है। हम उसके प्रेम के बारे में वैसे ही अनुभव कर सकते हैं जैसे यीशु के चेलों ने प्रार्थना के बारे में किया था। एक अवसर पर यीशु द्वारा प्रार्थना समाप्त करने पर, उसके एक चेले ने बिनती की, "हे प्रभु हमें प्रार्थना करनी सिखा दे" (लूका 11:1ख)। परमेश्वर के प्रेम को पाने के लिए आपको सांसारिक सोच से बाहर निकलना पड़ेगा। यदि हम प्रेम के उसके नये संबंध की चेष्टाओं को पाना चाहते हैं, तो हमें परमेश्वर के साथ अपने मन जोड़ने पड़ेंगे।

पहले, हमें यह अहसास करना पड़ेगा कि "मसीही अर्थ के अनुसार, प्रेम का अर्थ भावना नहीं है। प्रेम का अर्थ भावनाएं नहीं बल्कि इच्छा है," हो सकता है कि ऐसे समाज में बड़ा होने के बाद जहां प्रेम का संबंध कामुकता से जोड़ा जाता है, यह बात हमें चौंकाने वाली लगे। जो समाज यह माने कि प्रेम 90 प्रतिशत सैक्स हो सकता है वह परमेश्वर के प्रेम को समझने या उसके महत्व को जानने से बहुत दूर है। नये नियम में इरोस (अर्थात कामोत्तेजना) शब्द तो नहीं मिलता, परन्तु शारीरिक पाप के खतरों पर जोर दिया गया है (मत्ती 5:27, 29, 1 कुरिन्थियों 6:18-20)।

निश्चय ही, परमेश्वर की ओर से स्वीकृत प्रेम उससे उपर के स्तर में व्यक्त किया जाना चाहिए। विवाह का संस्थान मनुष्य जाति को आगे बढ़ाने और कामुक प्रेम

संबंध देने के लिए परमेश्वर का निर्धारित ढंग है। परमेश्वर की योजना के अनुसार चल रहे विवाह को उसकी ओर से इतना अधिक सम्मान दिया जाता है कि इसकी तुलना मसीह तथा उसकी कलीसिया के संबंध से की जाती है (रोमियों 5:22-33)।

प्रेम को व्यक्त करने का एक और सुन्दर ढंग मित्रता है। यीशु ने कहा था, "इससे बड़ा प्रेम किसी का नहीं कि कोई अपने मित्रों के लिए अपना प्राण दे" (यूहन्ना 15:13)। नये नियम में दर्जनों बार संज्ञा फिलोस का उपयोग प्राय: मित्रता का संकेत देता है (यूहन्ना 11:11; लूका 12:4)। क्रिया फिलियो युनानी शब्द का भी पवित्र शास्त्र में बार-बार उपयोग मित्रों के लिए प्रेम (यूहन्ना 11:3), यीशु के लिए प्रेम (यूहन्ना 11:15ख), तथा माता-पिता के प्रेम (मत्ती 10:37) को दिखाता है।

उसका प्रेम दिखाया गया

सबसे बड़ा प्रेम हमारे परमेश्वर के द्वारा वही दिखाया गया है जो प्रेम है (1 यूहन्ना 4:8)। नये नियम में अगापे युनानी शब्द सैकड़ों बार इस्तेमाल हुआ है। यह प्रेम जीवन की सबसे ऊंची भूमि की मांग करता है। यह स्वर्ग से मिलता है और इसे हमें वहां ले जाने के लिए बनाया गया है। यह कोई कल्पना नहीं है। यह मात्र प्रभाव नहीं है। हमारे लिए परमेश्वर का प्रेम जीवन अर्थात जीवित गुण है।

इतिहास में इस प्रेम का सबसे बड़ा प्रदर्शन परमेश्वर की सबसे बड़ी प्रेम भेंट है अर्थात यीशु मसीह जो उसका पुत्र है। यह सब कुछ दे देने वाला अगापे प्रेम था। "क्योंकि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम रखा है कि उसने अपना इकलौता पुत्र दे दिया ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे, वह नाश न हो, परन्तु अनन्त जीवन पाए" (यूहन्ना 3:16)। यीशु का यह बलिदान न केवल हमें पिता के उस प्रेम को दिखाता है जो वह हम से करता है, बल्कि पिता के लिए पुत्र के प्रेम को भी दिखाता है। गतसमनी में यीशु ने बहुत दुखी होकर प्रार्थना की थी कि माता की इच्छा पूरी हो, उसने अपने आपको अपनी इच्छा से सौंप दिया। संसार में प्रेम का सबसे बड़ा माप अर्थात यीशु मसीह हमारे प्रभु के द्वारा पिता की इच्छा के लिए अपनी इच्छा से स्वयं को दे देना है।

जब हम परमेश्वर से प्रेम रखते हैं, और उसकी आज्ञाओं को मानते हैं, तो इसी से हम जानते हैं कि परमेश्वर की संतानों से प्रेम रखते हैं। और परमेश्वर का प्रेम यह है, कि हम उसकी आज्ञाओं को मानें; और उसकी आज्ञाएं कठिन नहीं हैं (1 यूहन्ना 5:2,3)।

मैं मसीह की कलीसिया का सदस्य क्यों हूं? क्योंकि इसका संगठन पवित्र शास्त्र के अनुसार है

लिरॉय ब्राउनलो

1. पुरोहित तंत्र: साम्प्रदायिक कलीसियाओं का प्रबंध पुरोहित तंत्र की तरह चलाया जाता है। उन्होंने कलीसिया के सिर या मुखिया को नजरअंदाज करके स्वप्रबंध के

अधिकार को मान लिया है। वे मुंह से मानते हैं कि मसीह के पास सारा अधिकार है परन्तु उनका मन इससे इतना दूर है कि वह प्रबंध के लोकतांत्रिक रूप पर लगा हुआ है। इसीलिए हम अधिकतर सिनडों, प्रेसबिटरियों, काउंसिलों, जनरल असैम्बलियों और कॉन्फ्रसों के बारे में सुनते हैं। इन प्रतिनिधियों में लोगों ने अलग-अलग पुरोहिततंत्रों को चलाने के लिए अपने नियम और कायदे बना लिए हैं।

2. बेशक नियम बनाने की यह सामर्थ परमेश्वर के प्रेरणा रहित लोगों के किसी भी समूह को नहीं दी गई थी। लोगों के किसी भी समूह को बाइबल की ओर से यह निर्णय लेने का अधिकार नहीं दिया गया है कि प्रभुभोज वर्ष में कितनी बार लें, बपतिस्मे के कार्य को बदल लें, उद्धार की शर्त के रूप में बपतिस्में को एक ओर कर दें या ईश्वरीय आज्ञा में किसी प्रकार का परिवर्तन करें। कोई भी मनुष्य जो दावा करता हो कि कलीसिया का प्रबंध बदलने या प्रेरितों द्वारा दिए गए नियमों को बदलने का उसे अधिकार है, वह मसीह के जो सिर और सर्वोच्च अधिकार है, विरूद्ध बगावत करता हैं मसीह की इच्छा भी नियम है और इसका विरोध करने का अर्थ द्रोह है।

3. मसीह के सर्वोच्च अधिकार को ठुकराना संशोधनों के कारण है। एक परिवर्तन से दूसरा हुआ, और अन्त में मानवीय सिरों वाले धार्मिक समूह बन गए। संगठन में परिवर्तन से नियमों में परिवर्तन होना आवश्यक है, नियमों में होने वाला यह परिवर्तन राजा के रूप में मसीह को उतारकर शासन तथा हुकुमत करने के लिए किसी मानवीय अधिकारी को बिठा देता है।

2. राजतंत्र 1. मसीह की कलीसिया एक राजतंत्र है। यीशु एक सर्वोच्च सिर है। और वही देह, अर्थात कलीसिया का सिर है, वही आदि है और मरे हुओं में से जी उठने वालों में पहिलालौठा कि सब बातों में वही प्रधान ठहरे (कुलुस्सियों 1:18)। पौलुस की बात पर फिर ध्यान दें, और सब कुछ उसके पांवों तले कर दिया और उसे सब वस्तुओं पर शिरोमणी ठहराकर कलीसिया को दे दिया। यह उसकी दे है, और उसी की परिपूर्णता है, जो सब में सब कुछ पूर्ण करता है" (इफिसियों 1:22, 23)। रूपान्तर के समय परमेश्वर ने कहा था, यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं प्रसन्न हूं, इस की सुनो, (मत्ती 17:5)। परमेश्वर के दाहिने हाथ ऊपर उठाए जाने के कुछ पहले, मसीह ने कहा था, "स्वर्ग और पृथ्वी का सारा अधिकार मुझे दिया गया है" (मत्ती 28:18)। मसीह को सारा अधिकार दिया गया है, इसका अर्थ यह है कि मनुष्य को कोई अधिकार नहीं है। "सारी प्रधानता और सारा अधिकार और सामर्थ" (1 कुरिन्थियों 15:24) अन्त तक मसीह अपने पास रखेगा तभी अन्त होगा।

2. यीशु ने प्रेरितों पर पवित्र आत्मा भेजने की प्रतिज्ञा की, जिसने उन्हें सब बातें सिखानी थी और उन्हें वे सब बातें याद दिलानी थीं, जो यीशु ने उनके साथ की थी (यूहन्ना 14:26)। पवित्र आत्मा ने मसीह की गवाही देनी थी और प्रेरितों ने उसके गवाह बनना था (यूहन्ना 15:26, 27)। प्रेरितों की शिक्षा और साक्षी स्वर्ग में स्वीकृत होनी थी, क्योंकि पतरस से यह कहा गया था कि ''जो कुछ तू पृथ्वी पर बांधेगा, वह स्वर्ग में बंधेगा, और जो कुछ तू पृथ्वी पर खोलेगा वह स्वर्ग में खुलेगा" (मत्ती 16:19)। यह अधिकार प्रेरितों के अलावा मसीह ने कभी किसी दूसरे को नहीं दिया। प्रेरितों के इस ओर अपनी कनवेंशनों, काउंसिलों और सिनडों में ऐसे अधिकार का दावा करने का

अर्थ राजा का, जो अपने सिंहासन पर है, अनादर करने के अलावा और कुछ नहीं है।

3. कलीसिया की स्वायत्तता 1. कलीसिया की स्वायत्तता से हमारा भाव स्थानीय कलीसिया या मण्डली की स्वायत्तता है। स्वायत्तता का अर्थ, "अपना प्रबंध आप करने का अधिकार, अपना प्रबंध करने वाला राज्य, एक स्वतंत्र समूह" है। पहली सदी में हर मण्डली ऐसे ही कार्य करती थी। प्रत्येक मण्डली दूसरी मण्डली से स्वतंत्र होती थी। एक कलीसिया किसी दूसरी कलीसिया पर अधिकार नहीं जताती थी। रोम या यरूशलेम की कलीसिया को दूसरे इलाकों की कलीसियाओं पर अधिकार नहीं था। मण्डली के बाहर के लोगों को मण्डली के भीतर किसी अधिकार या बल का इस्तेमाल करने का अधिकार नहीं था। मण्डली के ऐल्डरों और डीकनों को किसी दूसरी मण्डली के ऐल्डरों और डीकनों पर किसी प्रकार का अधिकार चलाने की अनुमति नहीं थी। हर कलीसिया मसीह और प्रेरितों की शिक्षा को मानते हुए अपना प्रबंध चलाने, अपना काम करने और अपने मामले आप सुलझाने के लिए स्वतंत्र थी। स्थानीय मण्डली से बढ़कर कलीसिया का कोई प्रबंध नहीं था। सब मण्डलियों में वही सिर, नींव और उद्देश्य था, सब मण्डलियां एक ही सुसमाचार का प्रचार करती थी, और एक ही देह कहलाती थी। पर जहां तक अपने काम की बात है, हर मण्डली स्वतंत्र थी।

2. "अपनी कलीसियाओं के लिए ऐसे प्रबंध में परमेश्वर की बुद्धि दिखाई देती है।" यदि एक कलीसिया गलत शिक्षा या गलत प्रथाओं से प्रभावित होकर भ्रष्ट हो जाती तो दूसरी कलीसियाओं पर इसका कोई फर्क नहीं पड़ता था। यदि किसी एक कलीसिया में गड़बड़ होती थी, तो यह दूसरी कलीसियाओं में नहीं फैलती थी, यदि एक नाश होता तो दूसरी उसके साथ नहीं डूबती थी, यदि बड़े कांच की एक खिड़की बना दी जाए, तो टूटने पर पूरा कांच खराब हो जाएगा, पर यदि इसे कई कांचों से बनाया जाए, तो एक कांच के टूटने से इतना नुकसान नहीं होगा। कलीसियाओं की स्वतंत्रता एक-दूसरी के लिए सुरक्षा है।"एच. लियो बोल्स, गॉस्पल एडवोकेट, फरवरी 15, 1940

3. परन्तु साधारण संगठन से कई लोगों को संतुष्टि नहीं मिलती। जिस कारण उन्होंने पुरोहिततंत्र के स्वामित्व बनाने के लिए अपनी अमसीही अभिलाषाओं को पूरा करने के लिए कई परिवर्तन कर लिए। इतिहास बताता है कि कलीसिया के प्रबंध की सच्चाई से बड़े स्तर पर लोग दूर हो गए थे।

4. ऐल्डर 1. पवित्र आत्मा ने सिखाया है कि कलीसिया में ऐल्डर (प्राचीन) बिशप (अध्यक्ष) निगरान या पास्टर (रखवाले) ठहराए जाने चाहिए (तीतुस 1:5)। प्रेरितों के काम 20:17 में हम पढ़ते हैं कि पौलुस ने कलीसिया के प्राचीनों (ऐल्डरों) को बुलवाया। इस समूह के बारे में बात करते हुए पौलुस ने ऐलान किया कि वे अध्ययन बिशप्स (अमेरिकन स्टैण्डर्ड वर्जन या निगरान (किंग जेम्स वर्जन, प्रेरितों 20:28) थे। इस काम को करने वाले पुरुषों को पास्टर्स भी कहा जाता है (इफिसियों 4:11)। सो हर कलीसिया में ऐल्डरों या बिशपों की बहुसंख्या होती है, न कि बहुसंख्या कलीसियाओं पर एक बिशप की। पुरोहिततंत्र में लोगों ने पूरी तरह से इस ईश्वरीय प्रबंध को उलटकर कई कलीसियाओं पर एक बिशप का प्रबंध चला दिया है।

2. बिशपों या अध्यक्षों का कर्त्तव्य (1) (क) "अपनी" और पूरे झुण्ड की चौकसी करना (2) परमेश्वर की कलीसिया की रखवाली करना (प्रेरितों 20:28), (3) निर्बलों

को संभालना (प्रेरितों 20:35), खरी शिक्षा से उपदेश देना और (6) विवादियों का मुंह बंद करना (7) कायरों को ढाढंस देना (8) सब की ओर सहनशीलता दिखाना (1 थिस्सलुनीकियों 5:14) (9) दबाव से नहीं, परन्तु परमेश्वर की इच्छा के अनुसार आनन्द से, और नीच कमाई के लिए नहीं, पर मन लगाकर और जो लोग उन्हें सौंपे गए हैं, उन पर अधिकार न जता कर (10 झुण्ड के लिए आदर्श बनना (1 पतरस 5:2, 3) (11) बीमारों को देखने के लिए जाकर (याकूब 5:14) (12) सदस्यों की आत्माओं के लिए जागते रहना (इब्रानियों 13:17)। ऊपर दिए गए कर्तव्य उन्हें प्रभु की ओर से दिए गए हैं। जब यह काम नहीं होता, तो मण्डली को तकलीफ होती है। पूरी बाइबल में कहीं भी सबसे छोटा संकेत नहीं है कि ऐल्डरों को मसीह की व्यवस्था को नकारने या उसमें सुधार करने का अधिकार है। उन्हें केवल मसीह की व्यवस्था को लागू करने का अधिकार है, न कि उसके आदेशों को चलाने के लिए नियम बनाने का। धन्य है वह मण्डली जिसके ऐलडर ऊपर लिखित कर्तव्यों को पूरा करते हैं।

3. एक बिशप या ऐल्डर में निम्न योग्यताएं होनी आवश्यक है (2) सो चाहिए कि अध्यक्ष निर्दोष (2) एक ही पत्नी का पति (3) संयमी, (4) सुशील (5) सभ्य, (6) पहुनाई करने वाला (7) सिखाने में निपुण (8) न पियक्कड़ (9) न मारपीट करने वाला (10) वरन कोमल (11) न झगड़ालु (12) न लोभी, (13) जो अपने घर का अच्छा प्रबंध करता हो, और लड़के-वालों को सारी गंभीरता से अधीन रखता हो (जब कोई अपने घर ही का प्रबंध करना न जानता हो, तो परमेश्वर की कलीसिया की रखवाली क्योंकर करेगा)" (14) नया चेला न हो, ऐसा न हो कि अभिमान करके शैतान का दण्ड पाए (15) और बाहर वालों में भी उसका सुनाम हो (1 तीमुथियुस 3:2-7) (16) जिसके लड़के- वाले विश्वासी हो (17) न हठी (18) न क्रोधी (19) भलाई का चाहने वाला (20) न्यायी (21) पवित्र (22) जितेन्द्रिय हो (23) विश्वासयोग्य वचन पर जो धर्मोपदेश के अनुसार है, स्थिर रहे (तीतुस 1:6-9)। बहुत बार बिशप का काम ऐसे लोगों को सौंपा जाता है, जिनमें ये योग्यताएं नहीं होती और जो इस जिम्मेदारी को उनके कर्तव्यों की समझ के बिना ले लेते हैं।

4. मण्डली को आज्ञा है कि (1) जो तुम में परिश्रम करते हैं, और प्रभु में तुम्हारे अगुवे हैं, उन्हें मानो (2) और उनके काम के कारण प्रेम के साथ उन्हें बहुत ही आदर के योग्य समझो (1 थिस्सलुनीकियों 5:12, 13) (3) जो प्राचीन (ऐल्डर) अच्छा प्रबंध करते हैं, विशेषकर वे जो वचन सुनाने और सिखाने में परिश्रम करते हैं, वे दोगुने आदर के योग्य समझे जाएं (1 तीमुथियुस 5:17) (4) अपने अगुओं की मानो (5) और उनके अधीन रहो (इब्रानियों 13:17) (6) कोई दोष किसी प्राचीन पर लगाया जाए तो बिना दो या तीन गवाहों के उसको न सुनो (1 तीमुथियुस 5:19)। मण्डली का ऐल्डरों के प्रति कर्तव्यों को निभाना उतना ही आवश्यक है, जितना ऐल्डरों का कलीसिया के प्रति।

5. डीकन 1. डीकनों के कर्त्तव्य उतने स्पष्ट नहीं बताए गए, जितने ऐल्डरों के बताए गए हैं, परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि वे सहायक और सेवक थे। प्रेरितों के काम 6:1-6 में हम यरूशलेम की कलीसिया में "खिलाने पिलाने की सेवा" के लिए सात पुरुषों की नियुक्ति के बारे में पढ़ते हैं। बाइबल में इस समूह को डीकनों के रूप में

नहीं दिखाया गया, परन्तु मूल भाषा से हमें पता चलता है कि यह डीकनों या सेवकों का कार्य करते थे, डीकन शब्द का अर्थ सेवक ही है। इस प्रकार ऐल्डर अधिकारी या निगरान होते हैं और डीकन को सेवक कहा जाता है और ऐल्डरों का काम आत्मिक है और डीकनों का काम शारीरिक परन्तु उनके कामों को इन क्षेत्रों में सीमित नहीं किया जा सकता। हम यह नहीं कह सकते कि मण्डली में अधिकारियों के रूप में ऐल्डरों को कलीसिया के धन से कोई संबंध नहीं रखना चाहिए, क्योंकि प्रेरितों के काम 11:29, 30 में हम बरनाबास और शाऊल के हाथों यरूशलेम के ऐल्डरों के लिए चंदा ले जाने की बात पढ़ते हैं। न ही हम यह कह सकते हैं कि डीकनों का काम केवल शारीरिक मामलों तक सीमित है, क्योंकि हम पाते हैं कि स्तिफनुस और फिलिप्पुस, जो कि दोनों ही यरूशलेम में चुने गए सात लोगों में से थे, जिन्होंने बाद में बड़े बल और सताव के साथ यरूशलेम में प्रचार किया था।

2. इस कार्य के लिए चुने जाने वालों में निम्न योग्यताएं होनी आवश्यक है (1) सुनाम पुरुष (2) पवित्र आत्मा (3) और बुद्धि से परिपूर्ण (प्रेरितों 6:3); (4) गंभीर (5) न दो रंगी (6) न पियक्कड़ (7) न नीच कमाई के लोभी (8) विश्वास के भेद को शुद्ध विवेक से सुरक्षित रखें (9) पहले परखें जाएं (10) निर्दोष हो (11) इसी प्रकार से उनकी पत्नियां भी गंभीर हो दोष लगाने वाली न हो, पर सचेत और सब बातों में विश्वास योग्य हो (12) एक ही पत्नी के पति हो (13) लड़के बालों और अपने घरों का अच्छा प्रबंध करना जानते हो (1 तीमुथियुस 3:8-12)।

कलीसिया का संगठन बड़ा ही सादा है, पर ईश्वरीय योजना को बुरी तरह से बिगाड़ दिया गया है। इस योजना में सुधार के हर प्रयास का परिणाम विश्वास का त्याग और पुरोहिततंत्र का बढ़ना ही हुआ है।

पवित्र आत्मा परमेश्वर है

जैरी बेट्स

पिछले पाठ में मैंने यह दिखाते हुए कि यीशु परमेश्वर है, प्रमाण की चर्चा की थी और अब यही बात मैं पवित्र आत्मा के संबंध में करूंगा। यह अध्ययन यीशु से संबंधित अध्ययन से अधिक कठिन हैं उसके काम को तय कर पाना अधिक कठिन है और उसके काम के संबंध में कई दुरुपयोग पाए जाते हैं। बहुत से लोग इस युग को पवित्र आत्मा के युग के रूप में देखते हैं। इस प्रकार ऐसा लगता है कि पवित्र आत्मा को कई बार यीशु से और पिता परमेश्वर से भी ऊंचा कर दिया जाता है। बेशक आत्मा के संबंध में बाइबल की शिक्षा की एक दुरुपयोग होगा।

पवित्र आत्मा व्यक्ति है

पवित्र आत्मा में व्यक्तित्व वाली खूबियां हैं (यूहन्ना 14:26, 15:26, 16:13-14)। इन वचनों में यीशु ने नौ बार पवित्र आत्मा को व्यक्ति बताया।

वह बात करता है और दूसरों को बात करने की सामर्थ देता है : परन्तु आत्मा स्पष्टता से कहता है, कि ''आने वाले समयों में कितने लोग भरमाने वाली आत्माओं और दुष्टात्माओं की शिक्षाओं पर मन लगाकर विश्वास से बहक जाएंगे''

(1 तीमुथियुस 4:1)।

वह सिखाता है : परन्तु सहायक अर्थात पवित्र आत्मा जिसे पिता मेरे नाम से भेजेगा, वह तुम्हें सब बातें सिखाएगा, और जो कुछ मैंने तुम से कहा है, वह सब तुम्हें स्मरण कराएगा (यूहन्ना 14:26)।

वह अगुआई करता है : परन्तु जब वह अर्थात सत्य का आत्मा आएगा, तो तुम्हें सब सत्य का मार्ग बताएगा, क्योंकि वह अपनी ओर से न कहेगा, परन्तु जो कुछ सुनेगा वही कहेगा, और आने वाली बातें तुम्हें बताएगा" (यूहन्ना 16:13)।

उसका दिमाग है : और मनों का जांचने वाला जानता है कि आत्मा की मंसा क्या है? क्योंकि वह पवित्र लोगों के लिये परमेश्वर की इच्छा के अनुसार विनती करता है। (रोमियों 8:27)।

वह लगाव रखता है : हे भाइयो, हमारे प्रभु यीशु मसीह के और पवित्र आत्मा के प्रेम का स्मरण दिला कर मैं तुम से विनती करता हूं, कि मेरे लिये परमेश्वर से प्रार्थना करने में मेरे साथ मिलकर लौलीन रहो (रोमियों 15:30)।

वह इच्छा रखता है : परन्तु ये सब प्रभावशाली कार्य वही एक आत्मा करवाता है, और जिसे जो चाहता है वह बांट देता है (1 कुरिन्थियों 12:51)।

वह उदास हो सकता है : और परमेश्वर के पवित्र आत्मा को शोकित मत करो, जिस से तुम पर छुटकारे के दिन के लिए छाप दी गई है (इफिसियों 4:30)।

पवित्र आत्मा खुदा है : पवित्र आत्मा के परमेश्वर होने की स्पष्ट घोषणाओं में से एक प्रेरितों 5:3-4 में देखी जा सकती है। प्रेरितों 5 में हम हनन्यायह और सफीरा को कुछ सम्पत्ति बेचकर उससे प्राप्त धन निर्धनों की सहायता के लिए प्रेरितों के पास लाने को देखते हैं। परन्तु उन्होंने प्रेरितों से यह कहकर झूठ बोला था कि जितना उन्होंने कलीसिया को दिया था इतने में ही उन्होंने अपनी सम्पत्ति बेची थी। आयत 3 में हम पतरस को हनन्याह से यह कहते हुए देखते हैं, "हे हनन्याह, शैतान ने तेरे मन में यह बात क्यों डाली कि तू पवित्र आत्मा से झूठ बोले।" फिर आयत 4 के अंत में हमें पतरस की यह बात मिलती है, "तूने मनुष्यों से नहीं बल्कि परमेश्वर से झूठ बोला है।" परमेश्वर की प्रेरणा से पतरस ने ध्यान दिलाया कि यही झूठ परमेश्वर के साथ-साथ पवित्र आत्मा के साथ भी बोला गया। इसका मतलब यह हुआ कि आत्मा और पिता परमेश्वर बराबर है।

व्यवस्थाविवरण 32:12 में हम देखते हैं कि यहोवा परमेश्वर जंगल में "अकेला" इस्राएलियों की अगुआई करता था, परन्तु यशायाह 63:10 में हम पढ़ते हैं कि इस्राएलियों ने पवित्र आत्मा के विरूद्ध बगावत करके उसे खेदित किया था। यह विरोधाभास नहीं है बल्कि पवित्र आत्मा भी परमेश्वर है। पिता परमेश्वर, यीशु और आत्मा सब इस्राएलियों की अगुआई में शामिल है। यशायाह 40 में पूछता है कि आत्मा को किसने सिखाया या सलाह दी। रोमियों 11 में पौलुस इसी आयत को लेकर इसे परमेश्वर पिता के लिये इस्तेमाल करता है, यहां फिर पता चलता है कि दोनों बराबर हैं।

आत्मा में खुदा की खूबियां हैं

इब्रानियों 9:14 में आत्मा को सनातन आत्मा कहा गया है। आत्मा को सर्वव्यापी भी कहा गया है। 1 कुरिन्थियों 6:19 में पौलुस पूछता है, "क्या तुम नहीं जानते, कि तुम्हारी देह पवित्रात्मा का मंदिर है; जो तुम में बसा हुआ है और तुम्हें परमेश्वर की

ओर से मिलता है, और तुम अपने नहीं हो?" आत्मा का वास हर मसीही के हृदय में बताया गया है। मसीही लोग संसार भर में फैले हुए हैं इसलिए जब तक आत्मा खुदा न हो तब तक ऐसा होना संभव नहीं है कि वह हर जगह एक ही समय में हो। दाऊद ने इस बात को समझा कि पवित्र आत्मा से भागकर जाना असंभव है (भजन संहिता 139:7)। इसके अलावा आत्मा को अंतरयामी (सब कुछ जानने वाला) कहा गया है। 1 कुरिन्थियों 2:10 पर ध्यान दें, "परन्तु परमेश्वर ने उन को अपने आत्मा के द्वारा हम पर प्रगट किया, क्योंकि आत्मा सब बातें, वरन परमेश्वर की गूढ़ बातें भी जांचता हे।" आत्मा को परमेश्वर की गूढ़ बातें जानने वाला भी बताया गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि वह भी परमेश्वर है। मीका इस बात की घोषणा करता है कि वह "यहोवा की आत्मा से शक्ति, न्याय और पराक्रम पाकर परिपूर्ण" था (मीका 3:8)।

आत्मा खुदाई का काम करता है

आत्मा को सृष्टि की रचना में योगदान डालते दिखाया गया है। भजन लिखने वाले ने भजन 33:6 में लिखा है, "आकाशमण्डल यहोवा के वचन से और उसके सारे गण उसके मुंह की श्वास से बने।" श्वास यहां आत्मा को ही कहा गया होगा। ऐसा ही भजन 104:30 में मिलता है, "तू अपनी ओर से सांस भेजता है और वे सृजे जाते हैं, और तू धरती को नया कर देता है।" आत्मा ने केवल सृष्टि की रचना में ही योगदान नहीं दिया बल्कि पृथ्वी को बरकरार रखता और नया भी करता है।

यूहन्ना घोषणा करता है, "आत्मा तो जीवनदायक है" (यूहन्ना 6:63)। जीवन देने की सामर्थ तो केवल परमेश्वर में है। और यहां हमें यीशु के वचन यह कहते हुए मिलते हैं कि आत्मा जीवन दे सकता है। जिसका अर्थ यह हुआ कि आत्मा परमेश्वर है। 1 पतरस 3:18 में पतरस मसीह के दुख सहने और ऊंचा किए जाने की बात कर रहा है। वह कहता है कि यीशु ने दुख उठाए ताकि मनुष्यजाति परमेश्वर के निकट आ सके। वह शारीरिक रूप में तो मर गया परन्तु "आत्मा के भाव से जिलाया गया।" रोमियों 8:11 में पौलुस कहता है कि आत्मा ने यीशु को मुर्दों में से जिलाया और वह हमें भी जिलाएगा।

पवित्र आत्मा के खुदा होने का एक और प्रमाण यीशु का देहधारी होना है। मत्ती और लूका दोनों पुस्तकों में यह घोषणा की गई है कि यीशु पवित्र आत्मा के द्वारा जन्मा या गर्भ में आया (मत्ती 1:20; लूका 1:35)। कोई उसी का पुत्र होता है जिससे जन्मा हो, उसका अर्थ यह हुआ कि हम कह सकते हैं कि यीशु आत्मा का पुत्र है परन्तु कई जगहों में यीशु को परमेश्वर का पुत्र भी कहा गया है। जिसका अर्थ यह हुआ कि आत्मा भी परमेश्वर होगा। यह परमेश्वर के एक होने की शिक्षा की पुष्टि भी है, जिसे हम अगले पाठ में देखेंगे। यदि तीनों एक नहीं है, तो यीशु के दो पिता हुए।

पवित्र आत्मा की आराधना

2 कुरिन्थियों 13:14 में हम देखते हैं कि पवित्र आत्मा को पवित्र माने जाने वाले परमेश्वरत्व का भाग बताया गया है। "प्रभु यीशु मसीह का अनुग्रह और परमेश्वर का प्रेम और पवित्र आत्मा की सहभागिता तुम सब के साथ होती रहे।" परमेश्वर को

छोड़ किसी भी अन्य नाम को ढालना तीनों के राज की बात का अनादर करना होगा। ऐसी ही एक बात मत्ती 28:19 में यीशु के ग्रेट कमीशन में मिलती है।, "इसलिये तुम जाओ, सब जातियों के लोगों को चेला बनाओ; और उन्हें पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से बपतिस्मा दो।" किसी के नाम में बपतिस्मा देने का अर्थ आराधना का एक कार्य है। पौलुस ने किसी को अपने नाम में बपतिस्मा देने की अनुमति नहीं दी। (1 कुरिन्थियों 1:13)। इसका अर्थ यह हुआ कि यीशु के साथ-साथ आत्मा को वही आदर और आराधना मिलती है, जो पिता परमेश्वर को मिलती है।

मैं अपनी कलीसिया बनाऊंगा

रेय हॉक

"तू जीवते परमेश्वर का पुत्र मसीह है" (मत्ती 16:16)

क्या यीशु ने अपनी कलीसिया बनाने का वायदा किया था? मत्ती 16:18 के अनुसार, हां किया था। क्या अपने जी उठने और ऊपर उठाए जाने के बाद पहले पैंटिकास्ट वाले दिन यीशु ने कलीसिया (यानी चर्च, जो कि बुलाई हुई सभा है) आरंभ की थी? हां (प्रेरितों 2:1-47)। इस बुलाए हुए समूह के बारे में बाइबल के आंकड़ों पर ध्यान दें।

1. यह मसीह की देह थी (1 कुरिन्थियों 12:27)।
2. मसीह इसका सिर था (कुलुस्सियों 1:18)।
3. उसकी केवल एक ही देह है (इफिसियों 1:22, 23)।
4. जिन्होंने मसीह में विश्वास किया, अपने पिछले पापों से मन फिराया, और उसके नाम का अंगीकार किया, उन्हें पानी में डुबकी यानि बपतिस्में के द्वारा इसके अंदर मिलाया गया (गलातियों 3:27)।
5. सुसमाचार सुनाए जाने पर जब लोगों ने वही किया जो परमेश्वर की संतान बनने के लिए उन्हें आज्ञा दी गई थी, तो प्रभु ने उनहें अपने पुत्र की देह में मिला लिया (प्रेरितों 2:47)।
6. जब पौलुस तथा अन्य लोग प्रचार करने को निकले और लोगों ने सुसमाचार को मान लिया, तो वे उसी कलीसिया को छोड़ कर गए (1 कुरिन्थियों 1:10)।
7. जब लोगों ने इसे बांटने की कोशिश की, तो पौलुस ने इसकी निंदा की और मसीह ने भी इस फूट के विरूद्ध प्रार्थना की (यूहन्ना 17:20, 21; 1 कुरिन्थियों 1:10-13)।
8. प्रेरित और भविष्यवक्ता इसके सदस्य थे (इफिसियों 2:20)।
9. फिलिप्पुस और वे लोग जिन लोगों में उसने वचन सुनाकर उन्हें बपतिस्मा दिया था, इसके सदस्य थे (प्रेरितों 8:12)।
10. कुरिन्थुस के पवित्र लोग इसके सदस्य थे (1 कुरिन्थियों 1:2)।
11. रोम वासी, गलातिया वासी, इफिसुस वासी, फिलिप्पी आदि लोग इसके सदस्य थे (रोमियों 16:16; गलातियों 1:2; इफिसियों 1:1; फिलिप्पियों 1:1)।
12. यह कलीसिया हर समुदाय में, जहां सुसमाचार सुनाने पर, लोग विश्वास करते

और उसे मानते, बनती थी (मत्ती 28:19, 20)।
13. कलीसिया न तो रोमन कैथोलिक थी और न प्रोटेस्टेंट।
14. इसका केवल एक ही सिर यानी हैड था, मसीह (इफिसियों 1:22; 23)।
15. जो इसके सदस्य नहीं थे, वे खोए हुए थे (इफिसियों 2:12)।
16. इस देह के भीतर उद्धार पाए हुए लोग थे (प्रेरितों 2:47; 2 कुरिन्थियों 5:17)।
17. वे (उद्धार पाए हुए) परमेश्वर की संतान थे (गलातियों 3:26, 27)।
18. वे नया जन्म पाए हुए थे (यूहन्ना 3:1-5; 1 पतरस 1:22, 23)।
19. वे परमेश्वर का नया आत्मिक घर, याजकों का पवित्र समाज, चुना हुआ वंश (चुने हए लोग) राज-पदधारी, याजकों का समाज, पवित्र लोग और (परमेश्वर की निज प्रजा) थे (1 पतरस 2:5, 9)।
20. वे मसीह के साथ ब्याहे गए थे (रोमियों 7:4)।

पहली सदी में अगर इस कलीसिया/चर्च (यानी बुलाई हुई सभा) का जिसे यीशु ने बनाया था, मैंबर बनना संभव था, तो आज क्यों नहीं है? किसी सांप्रदायिक यानी डिनोमिनेशन का मैम्बर बने बिना, क्याआज केवल मसीही बना जा सकता है जो, मसीह की देह का अंग हो? बाइबल का उत्तर यही है "हां"।

चर्च (कलीसिया) को बहाल करना

बॉबी डॉकरी

कई साल पहले की बात है, फ्रांस में सोलेस नामक जगह पर एक किसान को खेत में एक खूंटे से ठोकर लग गई। इसे बाहर निकालने की कोशिश करते हुए उसे पता चला कि यह तो जमीन के अंदर काफी गहराई तक धंसा हुआ है। उसकी सहायता के लिए और भी लोग आ गए और उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि वह "खूंटा" वहां पर दबे हुए एक पुराने आराधना भवन का मीनार था। सदियों से प्रकृति के विनाश और युद्ध के मलबे ने इस भवन को इतना पूरी तरह से ढक दिया था कि अब किसी को याद भी नहीं था कि यहां पहले क्या होता था। अंत में पूरे भवन की खुदाई की गई और इसे फिर से इस्तेमाल के लिए बहाल कर दिया गया। यह घटना हमारे आधुनिक धार्मिक संसार की बहुत बड़ी आवश्यकता का प्रतीक है। आज से लगभग दो हजार साल पहले यीशु मसीह इस पृथ्वी पर अपनी कलीसिया को बनाने आया था और इसी के लिए मरा था (प्रेरितों 20:28; मत्ती 16:18)। परन्तु सदियों से वह कलीसिया जिसे मसीह ने बनाया था, मनुष्य की बनाई परम्पराओं, नई नई बातों और विचारों के मलबे और कूढ़े के नीचे दब गई थी (1 तीमुथियुस 4:1-4)।

इक्कीसवीं सदी में मसीहियत आगे को तभी बढ़ सकती है यदि वह नये नियम की, पहली सदी की कलीसिया की ओर पीछे को वापस जाए। हमारे विभाजित, परम्पराओं के ढेर के नीचे दबे धार्मिक संसार में उस कलीसिया को फिर से ढूंढ़ने के लिए, जिसे यीशु ने बनाया था, आधुनिक डिनोमिनेशनों के मलबे को हटाकर खुदाई करना आवश्यक है। इसके लिए हमें बाइबल की ओर वापस जाना होगा।